International Journal of Applied Research 2020; 6(10): 926-928

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2020; 6(10): 926-928
www.allresearchjournal.com
Received: 17-08-2020
Accepted: 22-09-2020

डॉ० श्याम सुन्दर चौधरी
शिक्षक, अ० प० बालिका उच्च +2 विद्यालय, ब्रह्मोत्तरा, पंडौल मधुबनी, बिहार, भारत

Corresponding Author:
डॉ० श्याम सुन्दर चौधरी
शिक्षक, अ० प० बालिका उच्च +2 विद्यालय, ब्रह्मोत्तरा, पंडौल मधुबनी, बिहार, भारत

व्याकरण शास्त्र एंव संगीत शास्त्र में सम्बद्धता

डॉ० श्याम सुन्दर चौधरी

सारांश
संगीत एवं व्याकरण के तत्वसूत्र रूद्र के डमरू से उत्पन्न माहेश्वरसूत्र ही है। माहेश्वरसूत्रों का रहस्य जानने से सर्व प्रपंच का रहस्य खुल जाता है। भाषा के स्वरों का वास्तविक गूढ़ अर्थ नंदिकेश्वर की 'काशिका' में प्राप्त हैं। संगीत के स्वरों का और व्याकरण के स्वरों का संबंध 'रूद्रडमरूद्भवसूत्र विवरण ' में मिलता है। माहेश्वरसूत्र का प्रथम सूत्र (अ इ उ ण्) हैं। प्रथम स्वर 'अ' कण्ठ में स्थित हैं, इसका उच्चारण बिना प्रयत्न ही होता हैं। अकार सर्व स्वरों का आधार एंव कारण हैं– **अकारो वै सर्वा वाक्।** 'अ' निगुर्ण ब्रह्म का द्योतक हैं। व्याकतरण एवं संगीत के स्वरों के अर्थ का समन्वय होता है।

मुख्य शब्दः याकरण शास्त्र एंव संगीत शास्त्र।

प्रस्तावना
प्राचीन भारतीय विद्वानों का मानना रहा है कि भाषा एंव संगीत एक ही विद्या के दो अंश है। दोनों के शास्त्रकार भी प्रायः एक ही हैं। व्याकरण एंव संगीत का आधारभूत तत्व गान्धर्ववेद का विषय था, परन्तु आज वह लुप्तप्राय माना जाता है। फिर भी व्याकरण एंव संगीत के प्राप्त ग्रन्थों में नाद एंव ध्वनि के विषय में बहुत विचार मिलते हैं जिससे इस विद्या के सिद्धान्त समझ में आ सकते हैं।

प्रस्तुतिकरण
अपनें विचारों को प्रकट करनें केलिये जीव शब्दों का दो भिन्न प्रकार से प्रयोग करता है– वर्णरूप शब्द तथा गीतरूप शब्द। दोनों का रूप भिन्न होते हुए भी एक ही आधार पर स्थित है क्योंकि दोनों में विचार एवं भाव प्रकट करनें केलिये ध्वनि का प्रयोग होता है। आधार एक ही होनें पर भी ध्वनि रूप स्पन्दन की भिन्न विशेषताओं का प्रयोग करनें से दोनों शब्द भिन्न मार्ग के माने जाते हैं।
भारतीय शास्त्रो में नाद का स्थान अत्यंत विलक्षण है। वाणी विचार–शक्ति का वाहक है। शब्द के बिना विचार का कोई भी अस्तित्व नहीं होता है। भतृर्हरि नें वाक्यपदीयम् में कहा है–

न सोऽस्ति प्रत्ययो लोके यः शब्दानुगमादृते ।
अनुविद्धमिव ज्ञानं सर्वं शब्देन भासते ।।
वागेव विश्व भुवनानि यज्ञे वाच इत।
स सर्वम्भृतं यच्च मर्त्यमिति श्रुतिः।।

अर्थात् संसार में कोई भी ऐसा ज्ञान नहीं, जो शब्द के बिना प्राप्य हो, प्रत्येक ज्ञान शब्द से अनुविद्ध होता है। शब्द लोक एंव परलोक का आधार है। यदि संसार को ईश्वर की विचार–शाक्ति का एक दृश्य स्वरूप मान लिया तो इस दिव्य कल्पना के स्पन्दन रूप नाद को संसार के प्रादुर्भाव का कारण मानना युक्ति संगत है–

वाक् से समस्त विश्व उत्पन्न हुए। वाक् से ही अमृत एंव मर्त्य–संसार का प्रादुर्भाव हुआ।

शब्दस्य परिणामोऽ यमित्याम्नायविदो विदुः।
(वाक्यपदीयम्)

अनादि परम्परा जाननें वाले ऋृषियों का कहना है कि संसार शब्द का परिणाम है। भगवान् कृष्ण ने गीता में कहा है–

'तस्माच्छास्त्रं प्रमाणं ते कार्याकार्यव्यवस्थितौ'

कार्य एवं अकार्य की व्यवस्थिति अर्थात् कर्त्तव्य एवं अकर्तव्य का निर्णय करने में शास्त्र ही एकमात्र प्रमाण है। मीमांसाकार जैमिनी तथा व्याकरण तत्वज्ञ पतंजलि ने शब्दों को नित्य सिद्ध करने के लिए कई युक्तियाँ लिखी हैं। उनसे शब्दमय वेदों की नित्यता प्रतिपादित होती है। ऋग्वेद (1/64/45) में वाणी की चार अवस्थाएँ मानी गयी हैं– 1. परा, 2. पश्यन्ती, 3. मध्यमा और 4. वैखरी। वाणी के तीन रूप गुप्त हैं, जिन्हें ब्रह्म ज्ञानी ही जानते है। चौथा शब्दमय वेद के रूप में लोगों में प्रचलित होता है।
शब्द ब्रह्म सगुण ब्रह्म है, वह प्रपंच का कारण माना जाता है तथा सगुण–निगुण का मार्ग होने से मोक्ष का साधन बनता है।

अतो गीत प्रपंचस्य श्रुत्यादेस्तत्वदर्शनात्।
अपि स्यात्सच्चिदानन्दरूपिणः परमात्मनः।।
प्राप्ति प्रभावृत्तस्य मणिसाभो यथा भवेत।
प्रत्यासन्नतयात्यन्तम्

गीत की श्रुति आदिके तत्त्व–दर्शन से सच्चिदानन्द परमात्मा की प्राप्ति वैसे ही हो जाती है, जैसे अग्निशिखा के उद्येश्य से प्रवृत्त पुरूष को मणिलाभ होता है।
शब्दों के वर्णादिरूप अर्थों से वास्तविक सम्बन्ध का विचार व्याकरण के प्रधान ग्रन्थों में सुरक्षित है। स्वरों द्वारा रस एवं विचार को प्राप्त करना साचाण गायकों की समझ से बाहर की बात है। अतः इस कठिन विद्या से सम्बन्धचित शास्त्र–ग्रन्थों की रक्षा साधारण गायकों से सम्भव नहीं। स्वरूप वाक् वर्णरूप शब्द का मूल्य स्वरूप है। संगीत के स्वरों का आधार माध्यम वाक् है, वैखरी वाक् नहीं। विशेष शब्दरूप स्पन्दन–मध्यमा वाक् पश्यन्ती नामक स्पष्ट विमर्श का परिणाम है, मध्यमा वाक् नादरूप होने से श्रोगेन्द्रिय से ग्राह्य है, फिर भी वर्ण रूप नहीं होती, इसलिये संगीत के स्वरूप नाद में अलग–अलग अक्षर नहीं होते। उसका अर्थ खण्डित न होंने से एकत्रित रहता हैं। गानक्रिया प्रायः मध्यमा वाक्द्वारा सम्पन्न होती है।
ऐतरेय ब्राह्मण का कहना है कि वेद के शब्दों का उच्चारण मध्यमा वाक् से करना चाहिए। वेद के शब्दों को गानें से बुद्धि सुसंस्कृत हो जाती है।
संगीत एवं व्याकरण के तत्वसूत्र रूद्र के डमरू से उत्पन्न माहेश्वरसूत्र ही है। माहेश्वरसूत्रों का रहस्य जानने से सर्व प्रपंच का रहस्य खुल जाता है। भाषा के स्वरों का वास्तविक गूढ़ अर्थ नंदिकेश्वर की 'काशिका' में प्राप्त हैं। संगीत के स्वरों का और व्याकरण के स्वरों का संबंध 'रूद्रडमरूद्भवसूत्र विवरण ' में मिलता है। माहेश्वरसूत्र का प्रथम सूत्र (अ इ उ ण्) हैं। प्रथम स्वर 'अ' कण्ठ में स्थित हैं, इसका उच्चारण बिना प्रयत्न ही होता हैं। अकार सर्व स्वरों का आधार एंव कारण हैं–

अकारो वै सर्वा वाक्। 'अ' निगुर्ण ब्रह्म का द्योतक हैं।
अकारो ब्रह्ममरूपःस्यानिर्गुणः सर्वस्तुषु। (नंदिकेश्वर)
अक्षराणामकारोऽस्मि। (गीता 10।33)

संगीत में 'अ ' का रूप– आधारभूत स्वर षडस हैं। इसके बिना किसी भी स्वर का अरितत्व नहीं है।
दूसरे स्वर 'इ' का स्थान तालु हैं। प्राण के बाहर निकालने की प्रवृति 'इ' शब्द का कारण है। 'इ' शक्ति या प्रकृति आदि का द्योतक हैं। इसको कामबीज भी कहते है।

इकारः सर्ववर्णानाम् शक्तित्वात् कारण मतम्। (नंदिकेश्वर 7)

शक्ति का द्योतक होनें से 'इ' कार सर्ववर्णों का कारण है। संगीत में 'इ' शिव का वाहन वृष एवं शक्ति रूप ऋषभ है। इसके श्रवण से वीर रस उत्पन्न होता है।
जब कण्ठ जिह्वा आदि 'इ' कार के उच्चारण के लिए तैयार किये जायँ और बिना किसी भी अंश के बदले 'अ' के उच्चारण का प्रयास होता है तब फलस्वरूप 'उ' कार निकलता है 'उ' कार 'इ' से परिच्छिन्न 'अ' का स्वरूप है।
उकारो विष्णुरित्याहुर्व्यापकत्वान्महेश्वरः। उकार सर्वव्यापक ईश्वरका स्वरूप है। संगीत में 'उ' कार गान्धार स्वर है। यह शृंगार–रस एवं करूण–रस को उत्पन्न करता है।
माहेश्वर का दूसरा सूत्र–(ऋ,लृ,क्) नपुंसक स्वरोंका सूत्र है। उनकी प्रधानता नहीं होती है। संगीत में दोनों स्वर 'काकली' एवं 'अन्तर' नाम से प्रसिद्ध है– **सप्तैव ते स्वराः प्रोक्तास्तेषु ऋ लृ नपुंसकौ।**
'ऋ' मूर्धन्य स्वर है। इसका अर्थ ऋत अर्थात् परमेश्वर है। संगीत में 'ऋ' अन्तर स्वर कहा जाता है, जो आधुनिक **शुद्ध गांधार** है इसका शांत रस है।
'लृ' दंत्य स्वर है, यह परमेश्वर की शक्ति है। दाँत मायाके संकेत है–

दन्ताः सत्ताधरास्तत्र मायाचालक उच्यते।

शक्तिमान अपनी शक्ति से अभिन्न होता है। वैसे ही 'ऋ' 'लृ' से अभिन्न है–

वृत्तिवृत्तिमतोरत्र भेदलेशो न विद्यते। चन्द्रचन्द्रिकयोर्यद्वद्यथा वागर्थयोरपि।।

(नंदिकेश्वर 11)

माहेश्वर का तीसरा सूत्र– (ए,ओ,ङ्) है। 'अ' कार एवं 'इ' कार का मिला हुआ रूप 'ए' कार है। 'इ' कार अर्थात् शक्तिमें 'अ' कार अर्थात् ब्रह्म का प्रवेश 'ए' कार का अर्थ है। इसलिए 'ए' कार ज्ञान का स्वरूप है। संगीत में 'ए' कार मध्यम स्वर कहा जाता है इसका रस शांत है। अकार एवं उकार का मिला हुआ रूप 'ओ' कार है। आकार अर्थात् परमब्रह्म का उकार अर्थात् परमात्मा से उत्पन्न पंचभूत में प्रवेश 'ओ' कार का रूप है। 'अ' निर्गुणरूप है और 'उ' सगुणरूप है। सगुण में निर्गुण 'ओ' का रहस्य है। अतः 'ओ' कार से प्रणव बनता है। संगीत में 'ओ' पंचम स्वर माना जाता है पंचम स्वर सुनने से सब जीव आनंदपूर्ण हो जाते है।
माहेश्वर का चौथा सूत्र– (ऐ,औ,च्) है। ए कार एवं अ कार का मिला हुआ रूप 'ऐ' है। संगीत में 'ऐ' को धैवत स्वर कहा जाता है। धैवत स्वर के दो रूप होते हैं। पहला शान्तपूर्ण मृदुरस और दूसरा क्रियास्वरूप आनंद रस है। 'ओ' कार एवं 'अ' का मिला हुआ रूप 'औ' कार है। संगीत में 'औ' कार निषाद नाम से प्रसिद्ध है। यह अंतिम स्वर या स्वरों की पराकाष्ठा माना जाता है। जो उपनिषदों का तत्व है वही निषाद कहा जाता है।

निषीदन्ति स्वराः सर्वे निषादस्तेन कथ्यते। (बृहद्देशी)

उच्चारण के मुख्य पांच ही स्थान है, इसलिए शुद्ध स्वरों की संख्या व्याकरण तथा संगीत दोनो में पांच ही है। इस प्रकार व्याकतरण एवं संगीत के स्वरों के अर्थ का समन्वय होता है। अत्यंत संक्षेप में उसका रूप यहाँ प्रस्तुत किया गया, फिर भी स्वरों के बाद व्यंजनो एवं श्रुतियोंके अर्थ भी मिलते हैं। विस्तारभय से इसका उल्लेख नहीं किया जा रहा है।
आधुनिक विद्वानों ने शब्द, ध्वनि, नाद, आदि में बहुत विचार नहीं किया है, वे भाषा एवं संगीत का अर्थ सांकेतिक मानते हैं। वे नहीं जानते कि शब्द एवं अर्थ का वास्तविक संबंध है। उनके विचार से किसी वस्तु का नाम किसी ने बिना कारण किसी समय दे दिया होगा, लोगों नें उसे याद कर लिया होगा इसीलिए वह उस वस्तु का नाम हो गया। प्राचीन शास्त्रकार के मत से स्पन्दनरूप वस्तु एवं स्पन्दनरूप शब्द के बीच घनिष्ठ संबंध होता है। इस

लिए प्रत्येक अर्थ के लिए एक शब्द होता है। और इसी शब्द में वह अर्थ उत्पन्न करने की शक्ति होती है। यदी इस शब्द के उच्चारण में अशुद्धता आ जाये तो वह केवल सांकेतिक रहता है। यही बात संगीत के विषय में भी है। स्वर– श्रुति आदि का एक स्वभाविक अर्थ है, जिससे रस उत्पन्न होता है, फिर भी स्वरों की अशुद्धि होनें पर लोग अपने स्मृति बल से अर्थ लगा लेते हैं, परन्तु ऐसा गान सर्वसाधारण और निरस प्रतीत होता है। शब्द एवं स्वरों का स्वभाविक अर्थ होना मंत्र और राग का कारण है। संगीत केवल विनोद की वस्तु नहीं बल्कि चिरस्थाई आनन्ददायी है, जिससे आत्मसुख की प्राप्ति होती है। जप एवं संगीत का अभ्यास मोक्ष के सरल साधन माने जाते हैं, परन्तु फल देने के निए उसका उच्चारण शुद्ध होना ही चाहिए–

वीणावादनातत्त्वज्ञः श्रुतिजातिविशारदः। तालज्ञश्चाप्रयासेन मोक्षमार्ग नियच्छति।।

(याज्ञवल्क्यस्मृति 3।115)

जो वीणा– वादन का तत्व जानने वाला है, श्रुतियों की जाति पहचाननें वाला है और तालों का ज्ञाता है, वह बिना परिश्रम के ही मोक्ष पा लेता है।

व्याकरण मे शब्द को सगुण ब्रह्म कहा गया है इसके अध्येता ब्रह्म के साधक माने गये है। इस प्रकार व्याकरण एवं संगीत के स्वरों का अर्थ भिन्न नहीं है। उनके वास्तविक एवं सांकेतिक अर्थ का समन्वय मंतग, नंदिकेश्वर, कोहल, भरतमुनि, याज्ञवल्क्य एवं क्षीरस्वामी प्रणीत ग्रथों से प्राप्त होता है।

संगीत के सात स्वरों में पांच स्वर प्रधान तथा दो गौण हैं। सामगान के पांच प्रधान स्वर प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ और मंद्र कहे जाते हैं। दो गौण स्वर क्रष्टु एवं अतिस्वार्य है। गान्धर्व गान में इन पंचस्वरों के नाम मध्यम, गान्धार ऋषभ षड्ज एवं धैवत हैं। गौण स्वर पंचम एवं निषाद है, परन्तु शैवगान मे षड्ज, ऋषभ, गान्धार, मध्यम और पंचम प्रधान एवं धैवत, निषाद गौण माने जाते हैं।

इन सात स्वरों के अतिरिक्त दो और मिश्रित स्वर हैं, उनके नाम 'काकली' और 'अन्तर स्वर ' हैं। संगीत में उन मिश्रित स्वरों का नाम साधारण अर्थात बीच का स्वर रखा है। इनके अतिरिक्त तीन और स्वरों के एक–एक विकृत रूप हैं। इससे शुद्धविकृत स्वरों की संख्या बारह होती है।

संगीत में नाद के छियासठ भिन्न रूप होते हैं, जिनको श्रुति कहते हैं। उनमें से एक तिहाई अर्थात् 22 प्रधान होते है। दूसरी दृष्टि से श्रुतियां अनन्त कही जा सकती हैं–

द्वाविशति केचिदुदाहरन्ति श्रुतीः श्रुतिज्ञानविचारदक्षाः।
षट्षष्ठिभिन्नाः खलु केचिदासामानन्त्यमेव प्रतिपादयन्ति।।

व्याकरण में भी भिन्न नादरूप छियासठ व्यञ्जन हैं, जिनकी आधी संख्या तैतिस प्रायः सर्वसाधारण प्रयोग में आती है। महेश्वर–सूत्रानुसार वैखरीरूप व्यंजनों की दसजातियाँ हैं, जिनके अर्थ भिन्न होते हैं।

संगीत में श्रुतियों की भिन्न रस उत्पन्न करनेवाली पांच जातियाँ होती है, जिनके नाम दीप्ता, आयता, मृदु, मध्या एवं करूणा है। उन स्वर जातियों के दो स्वरूप हैं–एक गणित का आधार स्वरूप, दूसरा रस का आधारस्वरूप हमकह सकते हैं कि वीणा के तार का तीसरा या पांचवा अंश होनें से एक रस विशेष हमारे मन में उत्पन्न होगा अर्थात् संगीत द्वारा भाव या विचार के तत्व को गणित रूप दिया जा सकता है। श्रुतियों के दो रूप हैं– एक भावरूप और दुसरा गणित रूप। गणितरूप रूप के द्वारा प्रपंच के अनेक अर्थो से शब्द का घनिष्ठ सम्बन्ध समझा जा सकता है। इसका फल यह है कि संसार रचना का रहस्य समझने के लिये नाद–विद्या एक अद्भूत साधन बनती है। विदित हो कि स्वरों के देवता, ऋषि, ग्रह, नक्षत्र रंग छन्द आदि का सम्बन्ध निरर्थक कल्पना नहीं, अपितु युक्ति संगत गंभीर तत्वपूर्ण अनिवार्य सत्य एवं प्राचीन तत्वदर्शी ऋषियों की अद्भुत देन है।

निष्कर्श

अकार एवं उकार का मिला हुआ रूप 'ओ' कार है। आकार अर्थात् परमब्रह्म का उकार अर्थात् परमात्मा से उत्पन्न पंचभूत में प्रवेश 'ओ' कार का रूप है। 'अ' निर्गुणरूप है और 'उ' सगुणरूप है। सगुण में निर्गुण 'ओ' का रहस्य है। अतः 'ओ' कार से प्रणव बनता है। संगीत में 'ओ' पंचम स्वर माना जाता है पंचम स्वर सुनने से सब जीव आनंदपूर्ण हो जाते है। ए कार एवं अ कार का मिला हुआ रूप 'ऐ' है। संगीत में 'ऐ' को धैवत स्वर कहा जाता है। धैवत स्वर के दो रूप होते हैं। पहला शान्तपूर्ण मृदुरस और दूसरा क्रियास्वरूप आनंद रस है।'ओ' कार एवं 'अ' का मिला हुआ रूप 'औ' कार है। संगीत में 'औ' कार निषाद नाम से प्रसिद्ध है। यह अंतिम स्वर या स्वरों की पराकाष्ठा माना जाता है। जो उपनिषदों का तत्व है वही निषाद कहा जाता है।

निषीदन्ति स्वराः सर्वे निषादस्तेन कथ्यते। (बृहद्देशी)

उच्चारण के मुख्य पांच ही स्थान है, इसलिए शुद्ध स्वरों की संख्या व्याकरण तथा संगीत दोनो में पांच ही है। इस प्रकार व्याकतरण एवं संगीत के स्वरों के अर्थ का समन्वय होता है।

सन्दर्भ

1. वाक्यपदीयम् ,काशी संस्कृत ग्रंथमाला
2. बृहद्देशी, मतंग मुनि कृत, सम्पादक– के सांबशिवशास्त्री
3. याज्ञवल्क्य स्मृति, मिताक्षरा टीका, डा0 गंगासागर राय, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, 2012।
4. भरतमुनि, नाट्यशास्त्र, सं. श्री बटुकनाथ शर्मा एवं बलदेव उपाध्याय, बनारस, 1929
5. भारतीय संस्कृति का विकास–वैदिकधारा, डा. मंगलदेव शास्त्री, इलाहाबाद, 1994
6. उणादिकोषः, ;व्याख्याकार–सोमलेखा एवं ईश्वरचन्द्रःद्ध चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, दिल्ली, संस्करण–2008
7. वाक्यपदीयम्, ब्रह्मकाण्ड, डॉ0 शिवशंकर अवस्थी, चौखम्बा विद्या भवन,चौक, वाराणसी, 2001 ।
8. वैदिक साहित्य का इतिहास, लेखक डॉ. पारसनाथ द्विवेदी, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।
9. समाज और संस्कृति, डॉ0 सावित्री चन्द्र शोभा, पटना, 1992
10. संस्कृत वाङ्मय का वृहद इतिहास, वेद खण्ड, पद्मभूषण आचाय बलदेव उपाध्याय, उत्तर प्रदेश संस्कृत संस्थान
11. वैदिक कोश, सूर्यकान्त, चौखम्बा कृष्णदास अकादमी, वाराणसी, वैदिक इण्डेक्स, भाग–1 ;रामकुमार रायद्ध, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी,